रूसी कहानी

फ़्योदोर दोस्तोयेव्स्की

मारेय नाम का किसान

मारेय नाम का किसान (रूसी कहानी) : फ़्योदोर दोस्तोयेव्स्की (हिंदी कहानी)

मारेय नाम का किसान (रूसी कहानी) : फ़्योदोर दोस्तोयेव्स्की - अनुवाद : सुशान्त सुप्रिय

Maarey Naam Ka Kisaan (Russian Story in Hindi) : Fyodor Dostoevsky - Translator : Sushant Supriye

वह ईस्टर के हफ़्ते का दूसरा दिन था। हवा गर्म थी, आकाश नीला था। सूरज गर्माहट देता हुआ देर तक आकाश में चमक रहा था, पर मेरा अंतर्मन बेहद अवसाद-ग्रस्त था। टहलता हुआ मैं जेल की बैरकों के पीछे जा निकला। सामान स्थानांतरित करने वाली मशीनों को गिनते हुए मैं बंदी-गृह की मज़बूत चारदीवारी को घूरता रहा। हालाँकि उनको गिनने का मेरा कोई इरादा नहीं था, पर यह मेरी आदत ज़रुर थी। बंदी-गृह में यह मेरी 'छुट्टियों' का दूसरा दिन था। आज बंदियों को काम करने के लिए नहीं ले जाया गया था। बहुत सारे लोग ज़्यादा पी लेने के कारण नशे में थे। हर कोने से लगातार गाली-गलौज और

लड़ने-झगड़ने की ऊँची आवाज़ें आ रही थीं। बिस्तरों के साथ बने चबूतरों पर ताश-पार्टियों और बेहूदा, घटिया गानों का प्रबंध किया गया था। हिंसा में लिप्त होने की वजह से कई क़ैदियों को उनके सहकर्मियों ने अधमरे होने तक पीटे जाने की सज़ा सुनाई थी। पूरी तरह ठीक हो जाने तक वे सभी भेड़ों की खालें लपेटे बिस्तरों पर निढाल पड़े थे।

लड़ाई-झगड़ों के दौरान यहाँ बात-बात पर चाकू-छुरे निकल जाते थे। पिछले दो दिनों की छुट्टियों के दौरान मुझे इन सब ने इतना उत्पीड़ित कर दिया कि मैं बीमार हो गया। नशेड़ियों का इतना ज़्यादा घृणित शोर-शराबा और इतनी अव्यवस्था मैं वाकई कभी नहीं सह सकता था, विशेषकर के इस जगह पर। ऐसे दिनों के दौरान बंदी-गृह के अधिकारी भी बंदी-गृह की कोई सुध नहीं लेते थे। इन दिनों वे यहाँ कोई तलाशी नहीं लेते थे, न वोदका की अवैध बोतलें ढूँढ़ निकालने के लिए छान-बीन ही करते थे। उनका मानना था कि इन बहिष्कृत लोगों को भी साल में एकाध बार मौज-मस्ती करने की अनुमति मिलनी चाहिए। यदि ऐसा नहीं हुआ तो स्थिति और ख़राब हो सकती है। आख़िरकार मेरा मन इस स्थिति के विरुद्ध ग़ुस्से से भर उठा।

इस बीच एम. नाम का एक राजनीतिक बंदी मुझे मिला। उसने मुझे विषाद भरी आँखों से देखा। अचानक उसकी आँखों में एक चमक आई और उसके होठ काँपे। "सब के सब डाकू-बदमाश हैं," ग़ुस्से से उसने कहा और आगे बढ़ गया। मैं बंदी-कक्ष में लौट आया, हालाँकि केवल पंद्रह मिनट पहले मैं दौड़कर यहाँ से

बाहर निकल गया था, जैसे मुझ पर पागलपन का दौरा पड़ा हो। दरअसल छह हट्टे-कट्टे बंदी नशे में धुत्त तातार गज़िन पर टूट पड़े थे। उसे नीचे दबा कर उन्होंने उसकी पिटाई शुरु कर दी थी। वे उसे जिस बेवक़ूफ़ाना ढंग से मार रहे थे उससे तो किसी ऊँट की भी मौत हो सकती थी। पर वे जानते थे कि हरक्यूलिस जैसे इस तगड़े आदमी को मार पाना इतना आसान नहीं था। इसलिए वे उसे बिना किसी संकोच या घबराहट के पीट रहे थे।

अब वापस लौटने पर मैंने पाया कि सबसे दूर वाले कोने के बिस्तर पर गज़िन लगभग बिना किसी जीवन के चिह्न के बेहोश पड़ा था। उसके ऊपर भेड़ की खाल डाल दी गई थी। सभी बंदी बिना कुछ बोले उसके चारों ओर से आ-जा रहे थे।

हालाँकि उन सभी को पूरी उम्मीद थी कि अगली सुबह तक वह होश में आ जाएगा, पर यदि उसकी क़िस्मत ख़राब रही होती तो यह भी सम्भव था कि इतनी मार खाने के बाद वह मर जाता। मैं किसी तरह जगह बनाता हुआ लोहे की छड़ों वाली खिड़की के सामने मौजूद अपने बिस्तर तक पहुँचा, जहाँ मैंने अपने हाथ अपने सिर के पीछे रख लिए और पीठ के बल लेट कर अपनी आँखें मूँद लीं। मुझे इस तरह लेटना पसंद था; सोए हुए आदमी को आप तंग नहीं कर सकते। और इस अवस्था में आप सोच सकते हैं और सपने देख सकते हैं।

लेकिन मैं सपने नहीं देख सका। मेरा चित्त अशांत था। बार-बार एम. के कहे शब्द मेरे कानों में गूँज रहे थे। पर मैं अपने विचारों

की चर्चा क्यों करूँ? अब भी कभी-कभी रात में मुझे उन दिनों के बारे में सपने आते हैं, और वे बेहद यंत्रणादायी होते हैं। शायद इस बात पर ध्यान दिया जाएगा कि आज तक मैंने बंदी-गृह में बिताए अपने जीवन के बारे में लिखित रूप में शायद ही कभी कोई बात की है। पंद्रह वर्ष पूर्व मैंने 'मृतकों का घर' नामक किताब एक ऐसे काल्पनिक व्यक्ति के चरित्र पर लिखी थी जो अपराधी था और जिसने अपनी पत्नी की हत्या की थी। यहाँ मैं यह बता दूँ कि तब से बहुत सारे लोगों ने यह मान लिया है कि मुझे बंदी-गृह इसलिए भेजा गया क्योंकि मैंने ही अपनी पत्नी की हत्या कर दी थी!

धीरे-धीरे मैं भुलक्कड़पन की अवस्था में चला गया, और फिर यादों में डूब गया। बंदी-गृह में बिताए अपने पूरे चार साल के दौरान मैं लगातार अपने अतीत की घटनाओं को याद करता रहता, और लगता था जैसे उन यादों के सहारे मैं अपना पूरा जीवन दोबारा जी रहा था। दरअसल ये स्मृतियाँ ख़ुद-ब-ख़ुद मेरे ज़हन में उमड़-घुमड़ आती थीं, मैं जान-बूझकर इन्हें याद करने की कोशिश नहीं करता था। कभी-कभी किसी अलक्षित घटना से इनकी शुरुआत होती, और धीरे-धीरे ज़हन में इनकी पूरी जीवंत तसवीर बन जाती। मैं इन छवियों का विश्लेषण करता, बहुत पहले घटी किसी घटना को नया रूप दे देता, और सबसे अच्छी बात यह थी कि मैं अपने मज़े के लिए इन्हें लगातार सुधारता रहता।

इस अवसर पर किसी कारणवश मुझे अचानक अपने बचपन का

एक अलक्षित पल याद आया जब मैं नौ वर्ष का था। यह एक ऐसा पल था जिसके बारे में मुझे लगा था कि मैं इसे भूल चुका था। पर उस समय मुझे अपने बचपन की स्मृतियों से विशेष लगाव था। मुझे गाँव में बने अपने घर में बिताए अगस्त माह की याद आई। वह एक शुष्क, चमकीला दिन था जब तेज़, ठंडी हवा चल रही थी। गर्मी का मौसम अपने अंतिम चरण में था और जल्दी ही हमें मास्को चले जाना था, जहाँ ठंड के महीनों में हम फ़्रांसीसी भाषा के पाठ याद करते हुए ऊब जाने वाले थे। इसलिए मुझे ग्रामीण इलाक़े में बने अपने घर को छोड़ने का बेहद अफ़सोस था। मैं मूसल से कूट-पीट कर अनाज निकालने वाली जगह के बगल से चलता हुआ गहरी, संकरी घाटी की ओर निकल गया। वहाँ मैं घनी झाड़ियों के झुरमुट तक गया जिसने उस संकरी घाटी को कौप्से तक ढँका हुआ था। मैं सीधा उन झाड़ियों के बीच घुस गया, और वहाँ मुझे लगभग तीस मीटर दूर बीच की ख़ाली जगह में खेत को जोतता हुआ एक किसान दिखा। मैं जानता था कि वह खड़ी ढलान वाली पहाड़ी पर जुताई कर रहा था, और उसके हाँफ़ते हुए घोड़े को बहुत प्रयास करना पड़ रहा था। अपने घोड़े का हौसला बढ़ाने वाली किसान की आवाज़ हर थोड़ी देर बाद तैरती हुई मेरी ऊँचाई तक पहुँच रही थी।

मैं अपने इलाक़े में रहने वाले लगभग सभी गुलाम किसानों को जानता था। पर इस समय कौन-सा किसान खेत जोत रहा था, यह मुझे नहीं पता था। सच पूछिए तो मैं यह जानना भी नहीं

चाहता था क्योंकि मैं अपने काम में डूबा हुआ था। आप कह सकते हैं कि मैं अखरोट के पेड़ की डंडियाँ तोड़ने में व्यस्त था। मैं उन डंडियों से मेंढकों को पीटता था। अखरोट के पेड़ की पतली डंडियाँ अच्छे चाबुक का काम करती हैं, लेकिन वे ज़्यादा दिनों तक नहीं चलती हैं। पर भोज-वृक्ष की पतली टहनियों का स्वभाव इससे ठीक उलट होता है। मेरी रुचि भौंरों और अन्य कीड़ों में भी थी; मैं उन्हें एकत्र करता था। इनका उपयोग सजावटी था। काले धब्बों वाली लाल और पीले रंग की छोटी, फुर्तीली छिपकलियाँ भी मुझे बहुत पसंद थीं, लेकिन मैं साँपों से डरता था। हालाँकि साँप छिपकलियों से ज़्यादा विरल थे।

वहाँ बहुत कुकुरमुत्ते होते थे। खुँबियों को पाने के लिए आपको भोज-वृक्षों के जंगल में जाना पड़ता था और मैं वहाँ जाने ही वाला था। पूरी दुनिया में मुझे और किसी चीज़ से उतना प्यार नहीं था जितना उस जंगल से और उसमें पाई जाने वाली चीज़ों और जीव-जंतुओं से -- कुकुरमुत्ते और जंगली बेर, भौंरे और रंग-बिरंगी चिड़ियाँ, साही और गिलहरियाँ। जंगल में ज़मीन पर गिरी नम, मरी पत्तियों की गंध मुझे अच्छी लगती थी। इतनी अच्छी कि यह पंक्ति लिखते समय भी मैं भोज-वृक्षों के उस जंगल की गंध को सूँघ रहा हूँ। ये छवियाँ जीवन भर मेरे साथ रहेंगी। उस गहरी स्थिरता के बीच अचानक मैंने स्पष्ट रूप से किसी के चिल्लाने की आवाज़ सुनी -- "भेड़िया!" यह सुनकर मैं बुरी तरह डर गया और ज़ोर से चीख़ते-चिल्लाते हुए मैं सीधा बीच के ख़ाली जगह में खेत जोत रहे उस किसान की ओर भागा।

अरे, वह तो मारेय नाम का हमारा गुलाम किसान था। मुझे नहीं पता कि ऐसा कोई नाम होता भी है, किंतु सभी उसे मारेय नाम से ही बुलाते थे। वह गठीले बदन वाला पचास साल का मोटा-तगड़ा किसान था, जिसकी भूरी दाढ़ी के कई बाल पके हुए थे। मैं उसे जानता था, हालाँकि मुझे पहले कभी उससे बात करने का मौक़ा नहीं मिला था। मेरी चीख़ सुनकर उसने अपना घोड़ा रोक लिया और हाँफ़ते हुए जब मैंने एक हाथ से उसके हल को और दूसरे हाथ से उसकी क़मीज़ के कोने को पकड़ा, तब उसने देखा कि मैं कितना डरा हुआ था।

"यहाँ कहीं एक भेड़िया है," मैं हाँफ़ते हुए चिल्लाया।

एक पल के लिए उसने अपना सिर चारों ओर ऐसे घुमाया जैसे उसे मेरी बात पर लगभग यक़ीन हो गया हो।

"कहाँ है भेड़िया?"

"कोई चिल्लाया था -- 'भेड़िया' ...," मैं हकलाते हुए बोला।

"बकवास। बिल्कुल बेकार बात। भेड़िया? अरे, वह तुम्हारी कल्पना होगी! यहाँ भेड़िया कैसे हो सकता है?" मुझे आश्वस्त करते हुए वह बोला। लेकिन मैं अभी भी डर के मारे थर-थर काँप रहा था और मैंने अभी भी उसकी क़मीज़ का कोना पकड़ रखा था। मैं काफ़ी डरा हुआ लग रहा हूँगा। उसने मेरी ओर एक फ़िक्र-भरी मुस्कान दी। ज़ाहिर है, मेरे कारण वह तनाव-ग्रस्त और चिंतित महसूस कर रहा था।

"अरे, तुम तो बेहद डर गए हो!" वह सिर हिलाते हुए बोला। "मेरे प्यारे बच्चे ... सब ठीक होगा!" अपना हाथ आगे बढ़ा कर वह मेरे गालों को थपथपाने लगा।

"आओ, आओ; ईश्वर सब ठीक करेगा। ईश्वर का नाम लो!"

लेकिन मैंने ऐसा नहीं किया। मेरे मुँह के कोने अब भी फड़क रहे थे, और उसने इसे देख लिया। उसने अपनी काले नाख़ून वाली मोटी, मिट्टी लगी उँगली आगे बढ़ाई और हल्के-से मेरे फड़कते हुए होठों को छुआ।

"चलो, शाबाश, शाबाश," माँ-जैसी कोमल, हल्की मुस्कान देते हुए उसने कहा, "प्यारे बच्चे, कुछ नहीं होगा। चलो, शाबाश!"

आख़िर मैं समझ गया कि वहाँ कोई भेड़िया नहीं था, और जो चीख़ मैंने सुनी थी वह महज़ मेरी कल्पना की उपज थी। हालाँकि वह चीख़ बेहद स्पष्ट थी, पर मैं ऐसी चीख़ों (केवल भेड़ियों के बारे में ही नहीं) की कल्पना पहले भी एक-दो बार कर चुका था। मैं यह बात जानता था। (जैसे-जैसे मैं बड़ा होता गया, मेरे ये निर्मूल भ्रम ख़त्म होते गए।)

"ठीक है, तो अब मैं चलूँगा," मैंने सहमी आवाज़ में उससे कहा।

"ठीक है, मैं तुम्हें जाते हुए दूर तक देखता रहूँगा। मैं भेड़िये को तुम्हारे पास नहीं आने दूँगा।" वह अब भी माँ-जैसी कोमल मुस्कान बिखेरता हुआ

बोला, "ईश्वर तुम्हारी रक्षा करें। चलो शाबाश, भागो।" फिर

उसने ज़ोर से ईश्वर का नाम लिया। मैं हर दसवें क़दम पर मुड़ कर पीछे देखते हुए आगे बढ़ने लगा। मारेय अपने घोड़े के साथ वहीं स्थिर खड़ा था। जितनी बार मैं पीछे मुड़ कर उसे देखता, वह सिर हिला कर मेरा हौसला बढ़ाता। मुझे यह मानना होगा कि मारेय के सामने ख़ुद को इतना डरा हुआ पा कर मैं शर्मिंदा महसूस कर रहा था। पर सच्चाई यही थी कि मैं अब भी भेड़िए के बारे में सोच कर डरा हुआ था। चलते-चलते उस सँकरी घाटी की आधी ढलान पार करके मैं पहले भुसौरे तक पहुँचा। वहाँ पहुँच कर मेरा डर पूरी तरह ग़ायब हो गया। उसी समय मेरा झबरा कुत्ता वॉल्तचोक पूँछ हिलाते हुए दौड़ कर मेरे पास पहुँचा। कुत्ते के आ जाने से मैं ख़ुद को सुरक्षित महसूस करने लगा। मैंने मुड़ कर अंतिम बार मारेय की ओर देखा। हालाँकि अब मुझे उसका चेहरा साफ़-साफ़ नहीं दिख रहा था, पर मुझे लगा जैसे वह अब भी मेरी ओर देख कर सिर हिला रहा था और प्यार से मुस्करा रहा था। मैंने उसकी ओर अपना हाथ हिलाया। जवाब में उसने भी मेरी ओर अपना हाथ हिलाया और फिर वह अपने घोड़े से मुख़ातिब हो गया, "चल, शाबाश!" दूर वहाँ मैंने दोबारा उसकी आवाज़ सुनी और फिर उसके घोड़े ने खेत जोतना शुरू कर दिया।

पता नहीं क्यों, मुझे ये सारी छोटी-छोटी बातें भी असाधारण रूप से अचानक याद आ गईं। कोशिश करके मैं अपने बिस्तर पर उठ कर बैठ गया। मुझे याद है, अपनी स्मृतियों के बारे में सोच कर मैंने स्वयं को चुपचाप मुस्कराता हुआ पाया। मैं उस सब के

बारे में थोड़ी देर और सोचता रहा।

जब उस दिन मैं घर वापस आया तो मैंने किसी को भी मारेय के साथ हुए अपने 'संकटपूर्ण' अनुभव के बारे में कुछ नहीं बताया। और सच कहूँ तो इसमें संकटपूर्ण जैसा कुछ भी नहीं था। और वास्तविकता यही है कि जल्दी ही मैं मारेय और इस घटना के बारे में भूल गया। यदा-कदा जब भी मेरी उससे मुलाक़ात हो जाती तो मैं उससे भेड़िये या उस दिन की घटना के बारे में कभी बात नहीं करता। पर बीस बरस बाद अचानक आज साइबेरिया में मुझे मारेय के साथ हुई अपनी वह मुलाक़ात और उसकी एक-एक बात बिल्कुल स्पष्ट रूप से याद आई। इस घटना की याद अवश्य ही मेरी आत्मा में कहीं छिपी हुई थी, हालाँकि ऊपर-ऊपर से मुझे इसके बारे में कुछ भी नहीं पता था। और जब मुझे इसकी ज़रूरत महसूस हुई तो यह अचानक मेरी स्मृति में पूरी शिद्दत से उठ खड़ी हुई।

मुझे उस बेचारे गुलाम कृषक के चेहरे पर मौजूद माँ-जैसी मृदु मुस्कान याद आई, और यह भी याद आया कि कैसे उसने अपनी उँगलियों से मुझ पर ईसाई धर्म के क्रॉस का चिह्न बनाया ताकि मैं हर मुसीबत से बचा रहूँ। मुझे उसका यह कहना भी याद आया, "अरे, तुम तो बेहद डर गए हो। मेरे प्यारे बच्चे, सब ठीक होगा।" और मुझे विशेष रूप से मिट्टी लगी उसकी उँगलियाँ याद आईं जिनसे उसने संकोचपूर्ण कोमलता से भर कर मेरे फड़फड़ाते होठों को धीरे से छुआ था। यदि मैं उसका अपना बेटा रहा होता तो भी वह इससे अधिक स्नेह-भरी चमकती

आँखों से मुझे नहीं देखता। और किस चीज़ ने उसे ऐसा बना दिया था? वह तो हमारा गुलाम कृषक था और कहने के लिए मैं उसका छोटा मालिक था। वह मेरे प्रति दयालु था, इस बात का पता न किसी को चलना था, न ही कोई उसे इसके लिए इनाम देने वाला था। क्या शायद छोटे बच्चों से उसे बहुत प्यार था ? कुछ लोगों का स्वभाव ऐसा होता है। वीरान खेत में यह मुझसे उसकी अकेली मुलाक़ात थी। शायद यह केवल ईश्वर ने ही ऊपर से देखा होगा कि एक रूसी गुलाम कृषक का हृदय कितने गहरे, मानवीय और सभ्य भावों से और कितनी कोमल, लगभग स्त्रियोचित मृदुता से भरा था। यह वह गुलाम किसान था जिसे अपनी आज़ादी का न कोई ख़्याल था, न उसकी कोई उम्मीद थी। क्या यही वह चीज़ नहीं थी जब कौंस्टैंटिन अक्साकोव ने हमारे देश के कृषकों में मौजूद उच्च कोटि की शिष्टता और सभ्यता की बात की थी?

और जब मैं अपने बिस्तर से उतरा और मैंने अपने चारों ओर देखा तो मुझे याद है, मुझे ऐसा महसूस हुआ जैसे मैं इन दुखी ग़ुलामों को बिल्कुल अलग क़िस्म की निगाहों से देख सकता हूँ। जैसे अचानक किसी चमत्कार की वजह से मेरे भीतर मौजूद सारी घृणा और क्रोध पूरी तरह ग़ायब हो गए थे। चलते हुए मैं मिलने वाले लोगों के चेहरे देखता रहा। वह किसान जिसने दाढ़ी बना रखी है, जिसके चेहरे पर अपराधी होने का निशान दाग दिया गया है, जो नशे में धुत्त कर्कश आवाज़ में गाना गा रहा है, वह वही मारेय हो सकता है। मैं उसके हृदय में झाँक कर नहीं देख

सकता।

उस शाम मैं एम. से दोबारा मिला। बेचारा! उसकी स्मृतियों और उसके विचारों में रूसी किसानों के प्रति अच्छे भाव नहीं थे। हाँ, पोलैंड के बंदियों को मुझसे कहीं ज़्यादा कटुता का बोझ उठाना पड़ रहा था।

(अनुवाद - सुशांत-सुप्रिय)